Knowledgeable Research (An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal) **ISSN 2583-6633**
Available Online: http://knowledgeableresearch.com Vol.03, No.2, September, 2024

शिक्षा का प्राचीन और अर्वाचीन परिदृश्य

[१]डॉ. बैकुण्ठ नाथ शुक्ल एवं [२]डॉ. विक्रान्त उपाध्याय
[१]एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,संस्कृत विभाग एवं [२]एसोसिएट प्रोफेसर, बी.एड. विभाग
ने० मे० शि० दास (पी.जी.), कॉलेज,बदायूँ

****

शोधसार : *शिक्षा का प्राचीन और अर्वाचीन परिदृश्य" शीर्षक इस शोध आलेख में शिक्षा के विकासक्रम को प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक विश्लेषित किया गया है। प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली, जिसमें गुरुकुलों, वैदिक शिक्षा और नालंदा-तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालयों की महत्वपूर्ण भूमिका थी, के साथ-साथ आधुनिक शिक्षा प्रणाली, जो तकनीकी उन्नति, वैश्वीकरण और बदलते सामाजिक-आर्थिक परिवेश से प्रभावित है, का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। इस शोध के माध्यम से शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों और सामाजिक प्रासंगिकता में आए परिवर्तनों की व्याख्या की गई है। साथ ही, यह आलेख शिक्षा के भविष्य की दिशा को लेकर कुछ सुझाव भी प्रस्तुत करता है।*

बीजशब्द **:** *शिक्षा, प्राचीन शिक्षा प्रणाली, आधुनिक शिक्षा, गुरुकुल, तकनीकी शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन।*

****

भारतीय शिक्षा का इतिहास भारतीय सभ्यता का भी इतिहास है। भारतीय समाज के विकास और उसमें होने वाले परिवर्तनों की रूपरेखा में शिक्षा की जगह और उसकी भूमिका को भी निरंतर विकासशील पाते हैं। सूत्रकाल तथा लोकायत के बीच शिक्षा की सार्वजनिक प्रणाली के पश्चात हम बौद्धकालीन शिक्षा को निरंतर भौतिक तथा सामाजिक प्रतिबद्धता से परिपूर्ण होते देखते हैं। बौद्धकाल में स्त्रियों और शूद्रों को भी शिक्षा की मुख्य धारा में सम्मिलित किया गया। गुरु शिष्य प्रथा में कभी भेद नई हवा करते थे सभी जातियों को एक समान मान कर शिक्षा दी जाती थी,पर कई लोग कर्ण का उदाहरण दे कर उसे गलत बताते हैं किंतु ऐसा नहीं था, दरअसल पांडव और कौरवों के शिक्षा के लिए एक गुरु द्रोण को निर्धारित किया गया था और गुरु द्रोण भी अपने मित्र से बदला लेने के लिए सिर्फ निर्धारित सिस्यो को प्रशिक्षित कर रहे थे, इस लिए उन्होंने उसे और किसी और को भी शिक्षा नई दी। प्राचीन भारत में जिस शिक्षा व्यवस्था का निर्माण किया गया था वह समकालीन विश्व की शिक्षा व्यवस्था से समुन्नत व उत्कृष्ट थी लेकिन कालान्तर में भारतीय शिक्षा का व्यवस्था ह्रास हुआ। विदेशियों ने यहाँ की शिक्षा व्यवस्था को उस अनुपात में विकसित नहीं किया, जिस अनुपात में होना चाहिये था। अपने संक्रमण काल में भारतीय शिक्षा को कई चुनौतियों व समस्याओं का सामना करना पड़ा। आज भी ये चुनौतियाँ व समस्याएँ हमारे सामने हैं जिनस १८५० तक भारत में गुरुकुल की प्रथा चलती आ रही थी परन्तु मैकाले द्वारा अंग्रेजी शिक्षा के संक्रमण के कारण भारत की प्राचीन शिक्षा व्यवस्था का अन्त हुआ और भारत में कई गुरुकुल बंद हुए और उनके स्थान पर कान्वेंट और पब्लिक स्कूल खोले गए।

भारत की प्राचीन शिक्षा आध्यात्मिकता पर आधारित थी। शिक्षा, मुक्ति एवं आत्मबोध के साधन के रूप में थी। यह व्यक्ति के लिये नहीं बल्कि धर्म के लिये थी। भारत की शैक्षिक एवं सांस्कृतिक परम्परा विश्व इतिहास में प्राचीनतम है। डॉ० अल्टेकर के अनुसार,***वैदिक युग से लेकर अब तक भारतवासियों के लिये शिक्षा का अभिप्राय यह रहा है कि शिक्षा प्रकाश का स्रोत है तथा जीवन के विभिन्न कार्यों में यह हमारा मार्ग आलोकित करती है।***

प्राचीन काल में शिक्षा को अत्यधिक महत्व दिया गया था। भारत 'विश्वगुरु' कहलाता था। विभिन्न विद्वानों ने शिक्षा को प्रकाश स्रोत, अन्तर्दृष्टि, अन्तर्ज्योति, ज्ञानचक्षु और तीसरा नेत्र आदि उपमाओं से विभूषित किया है। उस युग की यह मान्यता थी कि जिस प्रकार अन्धकार को दूर करने का साधन प्रकाश है, उसी प्रकार व्यक्ति के समस्त संशयों और भ्रमों को दूर करने का साधन शिक्षा है। प्राचीन काल में इस बात पर बल दिया गया कि शिक्षा व्यक्ति को जीवन का यथार्थ दर्शन कराती है तथा इस योग्य बनाती है कि वह भवसागर की बाधाओं को पार करके अन्त में मोक्ष को प्राप्त कर सके जो कि मानव जीवन का चरम लक्ष्य है।

प्राचीन भारत की शिक्षा का प्रारंभिक रूप हम ऋग्वेद में देखते हैं। ऋग्वेद युग की शिक्षा का उद्देश्य था तत्व साक्षात्कार। ब्रह्मचर्य, तप और योगाभ्यास से तत्व का साक्षात्कार करने वाले ऋषि, विप्र, वैघस, कवि, मुनि, मनीषी के नामों से प्रसिद्ध थे। साक्षात्कृत तत्वों का मंत्रों के आकार में संग्रह होता गया वैदिक संहिताओं में, जिनका स्वाध्याय, सांगोपांग अध्ययन, श्रवण, मनन और निदिध्यासन वैदिक शिक्षा रही।

विद्यालय 'गुरुकुल', 'आचार्यकुल', 'गुरु गृह' इत्यादि नामों से विदित थे। आचार्य के कुल में निवास करता हुआ, गुरु सेवा और ब्रह्मचर्य व्रतधारी विद्यार्थी षडंग वेद का अध्ययन करता था। शिक्षक को 'आचार्य' और 'गुरु' कहा जाता था और विद्यार्थी को ब्रह्मचारी, व्रतधारी, अंतेवासी, आचार्य कुलवासी। मंत्रों के द्रष्टा अर्थात् साक्षात्कार करनेवाले ऋषि अपनी अनुभूति और उसकी व्याख्या और प्रयोग को ब्रह्मचारी, अंतेवासी को देते थे। गुरु के उपदेश पर चलते हुए वेदग्रहण करनेवाले व्रतचारी श्रुतर्षि होते थे। वेदमंत्र कंठस्थ किए जाते थे। आचार्य स्वर से मंत्रों का परायण करते और ब्रह्मचारी उनको उसी प्रकार दोहराते चले जाते थे। इसके पश्चात् अर्थबोध कराया जाता था। ब्रह्मचर्य का पालन सभी विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य था। स्त्रियों के लिए भी यह आवश्यक समझा जाता था। आजीवन ब्रह्मचर्य पालन करनेवाले विद्यार्थी को नैष्ठिक ब्रह्मचारी कहते थे। ऐसी विद्यार्थिनी ब्रह्मवादिनी कही जाती थी।

यज्ञों का अनुष्ठान विधि से हो, इसलिए होता, उद्गाता, अध्वर्यु और ब्रह्मा को आवश्यक शिक्षा दी जाती थी। वेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, छंद, ज्योतिष और निरुक्त उनके पाठ्य होते थे। पाँच वर्ष के बालक की प्राथमिक शिक्षा आरंभ कर दी जाती थी। गुरुगृह में रहकर गुरुकुल की शिक्षा प्राप्त करने की योग्यता उपनयन संस्कार से प्राप्त होती थी। 8 वें वर्ष में ब्राह्मण बालक के, 11 वें वर्ष में क्षत्रिय के और 12 वें वर्ष में वैश्य के उपनयन की विधि थी। अधिक से अधिक यह 16, 22 और 24 वर्षों की अवस्था में होता था। ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए विद्यार्थी गुरुगृह में 12 वर्ष वेदाध्ययन करते थे। तब वे स्नातक कहलाते थे। समावर्तन के अवसर पर गुरुदक्षिणा देन की प्रथा थी। समावर्तन के पश्चात् भी स्नातक स्वाध्याय करते रहते थे। नैष्ठिक ब्रह्मचारी आजीवन अध्ययन करते थे। समावर्तन के सम ब्रह्मचारी दंड, कमंडलु, मेखला, आदि को त्याग देते थे। ब्रह्मचर्य व्रत में जिन - जिन वस्तुओं का निषेध था अब से उनका उपयोग हो सकता था। प्राचीन भारत में किसी प्रकार की परीक्षा नहीं होती थी और न कोई उपाधि ही दी जाती थी। नित्य पाठ पढ़ाने के पूर्व ब्रह्मचारी ने पढ़ाए हुए षष्ठ को समझा है और उसका अभ्यास नियम से किया है या नहीं, इसका पता आचार्य लगा लेते थे। ब्रह्मचारी अध्ययन और अनुसंधान में सदा लगे रहते थे तथा बाद विवाद और शास्त्रार्थ में सम्मिलित होकर अपनी योग्यता का प्रमाण देते थे।

भारतीय शिक्षा में आचार्य का स्थान बड़ा ही गौरव का था। उनका बड़ा आदर और सम्मान होता था। आचार्य पारंगत विद्वान्, सदाचारी, क्रियावान्, नि:स्पृह, निरभिमान होते थे और विद्यार्थियों के कल्याण के लिए सदा कटिबद्ध रहते थे। अध्यापक, छात्रों का चरित्र निर्माण, उनके लिए भोजन वस्त्र का प्रबंध, रुग्ण छात्रों की चिकित्सा, शुश्रूषा करते थे। कुल में सम्मिलित ब्रह्मचारी मात्र को आचार्य अपने परिवार का अंग मानते थे और उनसे वैसा ही व्यवहार रखते थे। आचार्य धर्मबुद्धि से नि:शुल्क शिक्षा देते थे। विद्यार्थी गुरु का सम्मान और उनकी आज्ञा का पालन करते थे। आचार्य का चरणस्पर्श कर दिनचर्या के लिए प्रात:काल ही प्रस्तुत हो जाते थे। गुरु के आसन के नीचे आसन ग्रहण करना, सुसंयत वेश में रहना, गुरु के लिए दातौन इत्यादि की व्यवस्था करना, उनके

आसन को उठाना और बिछाना, स्नान के लिए जल ला देना, समय पर वस्त्र और भोजन के पात्र को साफ करना, ईंधन संग्रह करना, पशुओं को चराना इत्यादि छात्रों के कर्तव्य माने जाते थे। विद्यार्थी ब्रह्ममुहूर्त में उठते थे और प्रात: काल कृत्यों से निवृत्त होकर, स्नान, संध्या, होम आदि कर लेते थे। फिर अध्ययन में लग जाते थे। इसके उपरांत भोजन करते थे और विश्राम के पश्चात् आचार्य के पाठ ग्रहण करते थे। सांयकाल समिधा एकत्र कर ब्रह्मचारी संध्या ओर होम का अनुष्ठान करते थे। विद्यार्थी के लिए भिक्षाटन अनिवार्य कृत्य था। भिक्षा से प्राप्त अन्न गुरु को समर्पित कर विद्यार्थी मनन और निदिध्यासन में लग जाते थे।

वेदों का अध्ययन श्रावण पूर्णिमा को उपाकर्म से प्रारंभ होकर पौष पूर्णिमा को उपसर्जन से समाप्त होता था। शेष महीनों में अधीत पाठों की आवृत्ति, पुनरावृत्ति होती रहती थी। विद्यार्थी पृथक् पृथक् पाठ ग्रहण करते थे, एक साथ नहीं। प्रतिपदा और अष्टमी को अनध्याय होता था। गाँव, नगर अथवा पड़ोस में आकस्मिक विपत्ति से और शिष्टजनों के आगमन से विशेष अनध्याय होते थे। अनध्याय में अधीत वेदमंत्रों की पुनरावृत्ति और विषयांतर का अध्ययन निषिद्ध न थे। विनय के नियमों का उल्लंघन करनेवाले विद्यार्थी को दंड देने की परिपाटी थी। पाठ्यक्रम के विस्तार के साथ वेदों ओर वेदांगों के अतिरिक्त साहित्य, दर्शन, ज्योतिष, व्याकरण और चिकित्साशास्त्र इत्यादि विषयों का अध्यापन होने लगा। टोल पाठशाला, मठ ओर विहारों में पढ़ाई होती थी।

काशी, तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला, वलभी, ओदंतपुरी, जग द्दल, नदिया, मिथिला, प्रयाग, अयोध्या आदि शिक्षा के केंद्र थे। दक्षिण भारत के एन्नारियम, सलौत्गि, तिरुमुक्कुदल, मलकपुरम् तिरुवोरियूर में प्रसिद्ध विद्यालय थे। अग्रहारों के द्वारा शिक्षा का प्रचार और प्रसार शताब्दियों होता रहा। कादिपुर और सर्वज्ञपुर के अग्रहार विशिष्ट शिक्षाकेंद्र थे। प्राचीन शिक्षा प्राय: वैयक्तिक ही थी। कथा, अभिनय इत्यादि शिक्षा के साधन थे। अध्यापन विद्यार्थी के योग्यतानुसार होता था अर्थात् विषयों को स्मरण रखने के लिए सूत्र, कारिका और सारनों से काम लिया जाता था। पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष पद्धति किसी भी विषय की गहराई तक पहुँचने के लिए बड़ी उपयोगी थी। भिन्न भिन्न अवस्था के छात्रों को कोई एक विषय पढ़ाने के लिए समकेंद्रिय विधि का विशेष रूप से उपयोग होता था सूत्र, वृत्ति, भाष्य, वार्तिक इस विधि के अनुकूल थे। कोई एक ग्रंथ के बृहत् और लघु संस्करण इस परिपाटी के लिए उपयोगी समझे जाते थे।

बौद्धों और जैनों की शिक्षापद्धति भी इसी प्रकार की थी।

भारत में मुस्लिम राज्य की स्थापना होते ही इस्लामी शिक्षा का प्रसार होने लगा। फारसी जानने वाले ही सरकारी कार्य के योग्य समझे जाने लगे। हिंदू अरबी और फारसी पढ़ने लगे। बादशाहों और अन्य शासकों की व्यक्तिगत रुचि के अनुसार इस्लामी आधार पर शिक्षा दी जाने लगी। इस्लाम के संरक्षण और प्रचार के लिए मस्जिदें बनती गई, साथ ही मकतबों, मदरसों और पुस्तकालयों की स्थापना होने लगी। मकतब प्रारंभिक शिक्षा के केंद्र होते थे और मदरसे उच्च शिक्षा के। मकतबों की शिक्षा धार्मिक होती थी। विद्यार्थी कुरान के कुछ अंशों का कंठस्थ करते थे। वे पढ़ना, लिखना, गणित, अर्जीनवीसी और चिट्ठीपत्री भी सीखते थे। इनमें हिंदू बालक भी पढ़ते थे।

मकतबों में शिक्षा प्राप्त कर विद्यार्थी मदरसों में प्रविष्ट होते थे। यहाँ प्रधानता धार्मिक शिक्षा दी जाती थी। साथ साथ इतिहास, साहित्य, व्याकरण, तर्कशास्त्र, गणित, कानून इत्यादि की पढ़ाई होती थी। सरकार शिक्षकों को नियुक्त करती थी। कहीं कहीं प्रभावशाली व्यक्तियों के द्वारा भी उनकी नियुक्ति होती थी। अध्यापन फारसी के माध्यम से होता था। अरबी मुसलमानों के लिए अनिवार्य पाठ्य विषय था। छात्रावास का प्रबंध किसी किसी मदरसे में होता था। दरिद्र विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति मिलती थी। अनाथालयों का संचालन होता था। शिक्षा नि:शुल्क थी। हस्तलिखित पुस्तकें पढ़ी और पढ़ाई जाती थीं।

राजकुमारों के लिए महलों के भीतर शिक्षा का प्रबंध था। राज्यव्यवस्था, सैनिक संगठन, युद्धसंचालन, साहित्य, इतिहास, व्याकरण, कानून आदि का ज्ञान गृहशिक्षक से प्राप्त होता था। राजकुमारियाँ भी शिक्षा पाती थीं। शिक्षकों का बड़ा सम्मान था। वे विद्वान् और सच्चरित्र होते थे। छात्र और शिक्षकों को आपसी संबंध प्रेम और सम्मान का था। सादगी, सदाचार, विद्याप्रेम और धर्माचरण पर जोर दिया जाता था। कंठस्थ करने की परंपरा थी।

प्रश्नोत्तर, व्याख्या और उदाहरणों द्वारा पाठ पढ़ाए जाते थे। कोई परीक्षा नहीं थी। अध्ययन अध्यापन में प्राप्त अवसरों में शिक्षक छात्रों की योग्यता और विद्वत्ता के विषय में तथ्य प्राप्त करते थे। दंड प्रयोग किया जाता था। जीविका उपार्जन के लिए भी शिक्षा दी जाती थी। दिल्ली, आगरा, बीदर, जौनपुर, मालवा मुस्लिम शिक्षा के केंद्र थे। मुसलमान शासकों के संरक्षण के अभाव में भी संस्कृत काव्य, नाटक, व्याकरण, दर्शन ग्रंथों की रचना और उनका पठन पाठन बराबर होता रहा।

भारत में आधुनिक शिक्षा की नींव यूरोपीय ईसाई धर्मप्रचारक तथा व्यापारियों के हाथों से डाली गई। उन्होंने कई विद्यालय स्थापित किए। प्रारंभ में मद्रास ही उनका कार्यक्षेत्र रहा। धीरे धीरे कार्यक्षेत्र का विस्तार बंगाल में भी होने लगा। इन विद्यालयों में ईसाई धर्म की शिक्षा के साथ साथ इतिहास, भूगोल, व्याकरण, गणित, साहित्य आदि विषय भी पढ़ाए जाते थे। रविवार को विद्यालय बंद रहता था। अनेक शिक्षक छात्रों की पढ़ाई अनेक श्रेणियों में कराते थे। अध्यापन का समय नियत था। साल भर में छोटी बड़ी अनेक छुट्टियाँ हुआ करती थीं।

प्राय: 150 वर्षों के बीतते बीतते व्यापारी ईस्ट इंडिया कंपनी राज्य करने लगी। विस्तार में बाधा पड़ने के डर से कंपनी शिक्षा के विषय में उदासीन रही। फिर भी विशेष कारण और उद्देश्य से 1781 में कलकत्ते में 'कलकत्ता मदरसा' कंपनी द्वारा और 1792 में बनारस में 'संस्कृत कालेज' जोनाथन डंकन द्वारा स्थापित किए गए। धर्मप्रचार के विषय में भी कंपनी की पूर्वनीति बदलने लगी। कंपनी अब अपने राज्य के भारतीयों को शिक्षा देने की आवश्यकता को समझने लगी। 1813 के आज्ञापत्र के अनुसार शिक्षा में धन व्यय करने का निश्चय किया गया। किस प्रकार की शिक्षा दी जाए, इसपर प्राच्य और पाश्चात्य शिक्षा के समर्थकों में मतभेद रहा। वाद विवाद चलता चला। अंत में लार्ड मेकाले के तर्क वितर्क और राजा राममोहन राय के समर्थन से प्रभावित हो 1835 ई. में लार्ड बेंटिक ने निश्चय किया कि अंग्रेजी भाषा और साहित्य और यूरोपीय इतिहास, विज्ञान, इत्यादि की पढ़ाई हो और इसी में 1813 के आज्ञापत्र में अनुमोदित धन का व्यय हो। प्राच्य शिक्षा चलती चले, परंतु अंग्रेजी और पश्चिमी विषयों के अध्ययन और अध्यापन पर जोर दिया जाए।

पाश्चात्य रीति से शिक्षित भारतीयों की आर्थिक स्थिति सुधरते देख जनता इधर झुकने लगी। अंग्रेजी विद्यालयों में अधिक संख्या में विद्यार्थी प्रविष्ट होने लगे क्योंकि अंग्रेजी पढ़े भारतीयों को सरकारी पदों पर नियुक्त करने की नीति की सरकारी घोषणा हो गई थी। सरकारी प्रोत्साहन के साथ साथ अंग्रेजी शिक्षा को पर्याप्त मात्रा में व्यक्तिगत सहयोग भी मिलता गया। अंग्रेजी साम्राज्य के विस्तार के साथ साथ अधिक कर्मचारियों की और चिकित्सकों, इंजिनियरों और कानून जाननेवालों की आवश्यकता पड़ने लगी। उपयोगी शिक्षा की ओर सरकार की दृष्टि गई। मेडिकल, इजिनियरिंग और लॉ कालेजों की स्थापना होने लगी। स्त्रियों की दशा सुधारने और उनकी शिक्षा के लिए ज्योतिबा फुले ने 1848 में एक स्कूल खोला। यह इस काम के लिए देश में पहला विद्यालय था। लड़कियों को पढ़ाने के लिए अध्यापिका नहीं मिली तो उन्होंने कुछ दिन स्वयं यह काम करके अपनी पत्नी सावित्री बाई फुले को इस योग्य बना दिया। उच्च वर्ग के लोगों ने आरंभ से ही उनके काम में बाधा डालने की चेष्टा की, किंतु जब फुले आगे बढ़ते ही गए तो उनके पिता पर दबाब डालकर पति-पत्नी को घर से निकालवा दिया इससे कुछ समय के लिए उनका काम रुका अवश्य, पर शीघ्र ही उन्होंने एक के बाद एक बालिकाओं के तीन स्कूल खोल दिए। स्त्री शिक्षा पर ध्यान दिया जाने लगा।

1853 में शिक्षा की प्रगति की जाँच के लिए एक समिति बनी। 1854 में बुड के शिक्षासंदेश पत्र में समिति के निर्णय कंपनी के पास भेज दिए गए। संस्कृत, अरबी और फारसी का ज्ञान आवश्यक समझा गया। औद्योगिक विद्यालयों और विश्वविद्यालयों की स्थापना का प्रस्ताव रखा गया। प्रातों में शिक्षा विभाग अध्यापक प्रशिक्षण नारीशिक्षा इत्यादि की सिफारिश की गई। 1857 में स्वतंत्रता युद्ध छिड़ गया जिससे शिक्षा की प्रगति में बाधा पड़ी। प्राथमिक शिक्षा उपेक्षित ही रही। उच्च शिक्षा की उन्नति होती गई। 1857 में कलकत्ता, बंबई और मद्रास में विश्वविद्यालय स्थापित हुए।

मुख्यतः प्राथमिक शिक्षा की दशा की जाँच करते हुए शिक्षा के प्रश्नों पर विचार करने के लिए 1882 में सर विलियम विल्सन हंटर की अध्यक्षता में भारतीय शिक्षा आयोग की नियुक्ति हुई। आयोग ने प्राथमिक शिक्षा के लिए उचित सुझाव दिए। सरकारी प्रयत्न को माध्यमिक शिक्षा से हटाकर प्राथमिक शिक्षा के संगठन में लगाने की सिफारिश की। सरकारी माध्यमिक स्कूल प्रत्येक जिले में एक से अधिक न हो; शिक्षा का माध्यम माध्यमिक स्तर में अंग्रेजी रहे। माध्यमिक स्कूलों के सुधार और व्यावसायिक शिक्षा के प्रसार के लिए आयोग ने सिफारिशें कीं। सहायता अनुदान प्रथा और सरकारी शिक्षाविभागों का सुधार, धार्मिक शिक्षा, स्त्री शिक्षा, मुसलमानों की शिक्षा इत्यादि पर भी आयोग ने प्रकाश डाला।

आयोग की सिफारिशों से भारतीय शिक्षा में उन्नति हुई। विद्यालयों की संख्या बढ़ी। नगरों में नगरपालिका और गाँवों में जिला परिषद् का निर्माण हुआ और शिक्षा आयोग ने प्राथमिक शिक्षा को इनपर छोड़ दिया परंतु इससे विशेष लाभ न हो पाया। प्राथमिक शिक्षा की दशा सुधर न पाई। सरकारी शिक्षा विभाग माध्यमिक शिक्षा की सहायता करता रहा। शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही रही। मातृभाषा की उपेक्षा होती गई। शिक्षा संस्थाओं और शिक्षितों की संख्या बढ़ी, परंतु शिक्षा का स्तर गिरता गया। देश की उन्नति चाहनेवाले भारतीयों में व्यापक और स्वतंत्र राष्ट्रीय शिक्षा की आवश्यकता का बोध होने लगा। स्वतंत्रताप्रेमी भारतीयों और भारतप्रेमियों ने सुधार का काम उठा लिया। 1870 में बाल गंगाधर तिलक और उनके सहयोगियों द्वारा पूना में फर्ग्यूसन कालेज, 1886 में आर्यसमाज द्वारा लाहौर में दयानंद ऐंग्लो वैदिक कालेज और 1898 में काशी में श्रीमती एनी बेसेंट द्वारा सेंट्रल हिंदू कालेज स्थापित किए गए।

[1] 1894 में कोल्हापुर रियासत के राजा छत्रपति साहूजी महाराज ने दलित और पिछड़ी जाति के लोगों के लिए विद्यालय खोले और छात्रावास बनवाए। इससे उनमें शिक्षा का प्रचार हुआ और सामाजिक स्थिति बदलने लगी। 1894 से 1922 तक पिछड़ी जातियों समेत समाज के सभी वर्गों के लिए अलग-अलग सरकारी संस्थाएं खोलने की पहल की। यह अनूठी पहल थी उन जातियों को शिक्षित करने के लिए, जो सदियों से उपेक्षित थीं, इस पहल में दलित-पिछड़ी जातियों के बच्चों की शिक्षा के लिए ख़ास प्रयास किये गए थे। वंचित और गरीब घरों के बच्चों को उच्च शिक्षा के लिए उन्होंने आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई। 1920 को नासिक में छात्रावास की नींव रखी। साहू महाराज के प्रयासों का परिणाम उनके शासन में ही दिखने लग गया था। साहू जी महाराज ने जब देखा कि अछूत-पिछड़ी जाति के छात्रों की राज्य के स्कूल-कॉलेजों में पर्याप्त संख्या हैं, तब उन्होंने वंचितों के लिए खुलवाये गए पृथक स्कूल और छात्रावासों को बंद करवा दिया और उन्हें सामान्य छात्रों के साथ ही पढ़ने की सुविधा प्रदान की। डा० भीमराव अम्बेडकर बड़ौदा नरेश की छात्रवृति पर पढ़ने के लिए विदेश गए लेकिन छात्रवृत्ति बीच में ही रोक दिए जाने के कारण उन्हे वापस भारत आना पड़ा। इसकी जानकारी जब साहू जी महाराज को हुई तो महाराज ने आगे की पढ़ाई जारी रखने के लिए उन्हें सहयोग दिया।

1901 में लार्ड कर्ज़न ने शिमला में एक गुप्त शिक्षा सम्मेलन किया था जिसें 152 प्रस्ताव स्वीकृत हुए थे। इसमें कोई भारतीय नहीं बुलाया गया था और न सम्मेलन के निर्णयों का प्रकाशन ही हुआ। इसको भारतीयों ने अपने विरुद्ध रचा हुआ षड्यंत्र समझा। कर्ज़न को भारतीयों का सहयोग न मिल सका। प्राथमिक शिक्षा की उन्नति के लिए कर्ज़न ने उचित रकम की स्वीकृति दी, शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की तथा शिक्षा अनुदान पद्धति और पाठ्यक्रम में सुधार किया। कर्ज़न का मत था कि प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से ही दी जानी चाहिए। माध्यमिक स्कूलों पर सरकारी शिक्षाविभाग और विश्वविद्यालय दोनों का नियंत्रण आवश्यक मान लिया गया। आर्थिक सहायता बढ़ा दी गई। पाठ्यक्रम में सुधार किया गया। कर्जन माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में सरकार का हटना उचित नहीं समझता था, प्रत्युत सरकारी प्रभाव का बढ़ाना आवश्यक मानता था। इसलिए वह सरकारी स्कूलों की संख्या बढ़ाना चाहता था। लार्ड कर्जन ने विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षा की उन्नति के लिए 1902 में भारतीय विश्वविद्यालय आयोग नियुक्त किया। पाठ्यक्रम, परीक्षा, शिक्षण, कालेजों की शिक्षा, विश्वविद्यालयों का पुनर्गठन इत्यादि विषयों पर विचार करते हुए आयोग ने सुझाव उपस्थित किए। इस आयोग में भी कोई भारतीय न था। इसपर भारतीयों में क्षोभ बढ़ा। उन्होंने विरोध किया। 1904

में भारतीय विश्वविद्यालय कानून बना। पुरातत्व विभाग की स्थापना से प्राचीन भारत के इतिहास की सामग्रियों का संरक्षण होने लगा। 1905 के स्वदेशी आंदोलन के समय कलकत्ते में जातीय शिक्षा परिषद् की स्थापना हुई और नैशनल कालेज स्थापित हुआ जिसके प्रथम प्राचार्य अरविंद घोष थे। बंगाल टेकनिकल इन्स्टिट्यूट की स्थापना भी हुई।

1911 में गोपाल कृष्ण गोखले ने प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क और अनिवार्य करने का प्रयास किया। अंग्रेज़ सरकार और उसके समर्थकों के विरोध के कारण वे सफल न हो सके। 1913 में भारत सरकार ने शिक्षानीति में अनेक परिवर्तनों की कल्पना की। परंतु प्रथम विश्वयुद्ध के कारण कुछ हो न पाया। प्रथम महायुद्ध के समाप्त होने पर कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग नियुक्त हुआ। आयोग ने शिक्षकों का प्रशिक्षण, इंटरमीडिएट कालेजों की स्थापना, हाई स्कूल और इंटरमीडिएट बोर्डों का संगठन, शिक्षा का माध्यम, ढाका में विश्वविद्यालय की स्थापना, कलकत्ते में कालेजों की व्यवस्था, वैतनिक उपकुलपति, परीक्षा, मुस्लिम शिक्षा, स्त्रीशिक्षा, व्यावसायिक और औद्योगिक शिक्षा आदि विषयों पर सिफारिशें की। बंबई, बंगाल, बिहार, आसाम आदि प्रांतों में प्राथमिक शिक्षा कानून बनाये जाने लगे। माध्यमिक क्षेत्र में भी उन्नति होती गई। छात्रों की संख्या बढ़ी। माध्यमिक पाठ्य में वाणिज्य और व्यवसाय रखे दिए गए। स्कूल लीविंग सर्टिफिकेट परीक्षा चली। अंग्रेजी का महत्व बढ़ता गया। अधिक संख्या में शिक्षकों का प्रशिक्षण होने लगा।

1916 तक भारत में पाँच विश्वविद्यालय थे। अब सात नए विश्वविद्यालय स्थापित किए गए। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय तथा मैसूर विश्वविद्यालय 1916 में, पटना विश्वविद्यालय 1917 में, ओसमानिया विश्वविद्यालय 1918 में, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय 1920 में और लखनऊ और ढाका विश्वविद्यालय 1921 में स्थापित हुए। असहयोग आंदोलन से राष्ट्रीय शिक्षा की प्रगति में बल और वेग आए। बिहार विद्यापीठ, काशी विद्यापीठ, गौड़ीय सर्वविद्यायतन, तिलक विद्यापीठ, गुजरात विद्यापीठ, जामिया मिल्लिया इस्लामिया आदि राष्ट्रीय संस्थाओं की स्थापना हुई। शिक्षा में व्यावहारिकता लाने की चेष्टा की गई। 1921 से नए शासनसुधार कानून के अनुसार सभी प्रांतों में शिक्षा भारतीय मंत्रियों के अधिकार में आ गई। परंतु सरकारी सहयोग के अभाव के कारण उपयोगी योजनाओं का कार्यान्वित करना संभव न हुआ। प्राय: सभी प्रांतों में प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य करने की कोशिश व्यर्थ हुई। माध्यमिक शिक्षा में विस्तार होता

आयोग की सिफारिशों से भारतीय शिक्षा में उन्नति हुई। विद्यालयों की संख्या बढ़ी। नगरों में नगरपालिका और गाँवों में जिला परिषद् का निर्माण हुआ और शिक्षा आयोग ने प्राथमिक शिक्षा को इनपर छोड़ दिया परंतु इससे विशेष लाभ न हो पाया। प्राथमिक शिक्षा की दशा सुधर न पाई। सरकारी शिक्षा विभाग माध्यमिक शिक्षा की सहायता करता रहा। शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही रही। मातृभाषा की उपेक्षा होती गई। शिक्षा संस्थाओं और शिक्षितों की संख्या बढ़ी, परंतु शिक्षा का स्तर गिरता गया। देश की उन्नति चाहनेवाले भारतीयों में व्यापक और स्वतंत्र राष्ट्रीय शिक्षा की आवश्यकता का बोध होने लगा। स्वतंत्रताप्रेमी भारतीयों और भारतप्रेमियों ने सुधार का काम उठा लिया। 1870 में बाल गंगाधर तिलक और उनके सहयोगियों द्वारा पूना में फर्ग्यूसन कालेज, 1886 में आर्यसमाज द्वारा लाहौर में दयानंद ऐंग्लो वैदिक कालेज और 1898 में काशी में श्रीमती एनी बेसेंट द्वारा सेंट्रल हिंदू कालेज स्थापित किए गए।

[1] 1894 में कोल्हापुर रियासत के राजा छत्रपति साहूजी महाराज ने दलित और पिछड़ी जाति के लोगों के लिए विद्यालय खोले और छात्रावास बनवाए। इससे उनमें शिक्षा का प्रचार हुआ और सामाजिक स्थिति बदलने लगी। 1894 से 1922 तक पिछड़ी जातियों समेत समाज के सभी वर्गों के लिए अलग-अलग सरकारी संस्थाएं खोलने की पहल की। यह अनूठी पहल थी उन जातियों को शिक्षित करने के लिए, जो सदियों से उपेक्षित थीं, इस पहल में दलित-पिछड़ी जातियों के बच्चों की शिक्षा के लिए ख़ास प्रयास किये गए थे। वंचित और गरीब घरों के बच्चों को उच्च शिक्षा के लिए उन्होंने आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई। 1920 को नासिक में छात्रावास की नींव रखी। साहू महाराज के प्रयासों का परिणाम उनके शासन में ही दिखने लग गया था। साहू जी महाराज ने जब देखा कि अछूत-पिछड़ी जाति के छात्रों की राज्य के स्कूल-कॉलेजों

में पर्याप्त संख्या हैं, तब उन्होंने वंचितों के लिए खुलवाये गए पृथक स्कूल और छात्रावासों को बंद करवा दिया और उन्हें सामान्य छात्रों के साथ ही पढ़ने की सुविधा प्रदान की। डा० भीमराव अम्बेडकर बड़ौदा नरेश की छात्रवृति पर पढ़ने के लिए विदेश गए लेकिन छात्रवृत्ति बीच में ही रोक दिए जाने के कारण उन्हे वापस भारत आना पड़ा। इसकी जानकारी जब साहू जी महाराज को हुई तो महाराज ने आगे की पढ़ाई जारी रखने के लिए उन्हें सहयोग दिया। 1901 में लार्ड कर्ज़न ने शिमला में एक गुप्त शिक्षा सम्मेलन किया था जिसें 152 प्रस्ताव स्वीकृत हुए थे। इसमें कोई भारतीय नहीं बुलाया गया था और न सम्मेलन के निर्णयों का प्रकाशन ही हुआ। इसको भारतीयों ने अपने विरुद्ध रचा हुआ षड्यंत्र समझा। कर्ज़न को भारतीयों का सहयोग न मिल सका। प्राथमिक शिक्षा की उन्नति के लिए कर्ज़न ने उचित रकम की स्वीकृति दी, शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था की तथा शिक्षा अनुदान पद्धति और पाठ्यक्रम में सुधार किया। कर्ज़न का मत था कि प्राथमिक शिक्षा मातृभाषा के माध्यम से ही दी जानी चाहिए। माध्यमिक स्कूलों पर सरकारी शिक्षाविभाग और विश्वविद्यालय दोनों का नियंत्रण आवश्यक मान लिया गया। आर्थिक सहायता बढ़ा दी गई। पाठ्यक्रम में सुधार किया गया। कर्जन माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में सरकार का हटना उचित नहीं समझता था, प्रत्युत सरकारी प्रभाव का बढ़ाना आवश्यक मानता था। इसलिए वह सरकारी स्कूलों की संख्या बढ़ाना चाहता था। लार्ड कर्जन ने विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षा की उन्नति के लिए 1902 में भारतीय विश्वविद्यालय आयोग नियुक्त किया। पाठ्यक्रम, परीक्षा, शिक्षण, कालेजों की शिक्षा, विश्वविद्यालयों का पुनर्गठन इत्यादि विषयों पर विचार करते हुए आयोग ने सुझाव उपस्थित किए। इस आयोग में भी कोई भारतीय न था। इसपर भारतीयों में क्षोभ बढ़ा। उन्होंने विरोध किया। 1904 में भारतीय विश्वविद्यालय कानून बना। पुरातत्व विभाग की स्थापना से प्राचीन भारत के इतिहास की सामग्रियों का संरक्षण होने लगा। 1905 के स्वदेशी आंदोलन के समय कलकत्ते में जातीय शिक्षा परिषद् की स्थापना हुई और नैशनल कालेज स्थापित हुआ जिसके प्रथम प्राचार्य अरविंद घोष थे। बंगाल टेकनिकल इन्स्टिट्यूट की स्थापना भी हुई।

1911 में गोपाल कृष्ण गोखले ने प्राथमिक शिक्षा को नि:शुल्क और अनिवार्य करने का प्रयास किया। अंग्रेज़ सरकार और उसके समर्थकों के विरोध के कारण वे सफल न हो सके। 1913 में भारत सरकार ने शिक्षानीति में अनेक परिवर्तनों की कल्पना की। परंतु प्रथम विश्वयुद्ध के कारण कुछ हो न पाया। प्रथम महायुद्ध के समाप्त होने पर कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग नियुक्त हुआ। आयोग ने शिक्षकों का प्रशिक्षण, इंटरमीडिएट कालेजों की स्थापना, हाई स्कूल और इंटरमीडिएट बोर्डों का संगठन, शिक्षा का माध्यम, ढाका में विश्वविद्यालय की स्थापना, कलकत्ते में कालेजों की व्यवस्था, वैतनिक उपकुलपति, परीक्षा, मुस्लिम शिक्षा, स्त्रीशिक्षा, व्यावसायिक और औद्योगिक शिक्षा आदि विषयों पर सिफारिशें की। बंबई, बंगाल, बिहार, आसाम आदि प्रांतों में प्राथमिक शिक्षा कानून बनाये जाने लगे। माध्यमिक क्षेत्र में भी उन्नति होती गई। छात्रों की संख्या बढ़ी। माध्यमिक पाठ्य में वाणिज्य और व्यवसाय रखे दिए गए। स्कूल लीविंग सर्टिफिकेट परीक्षा चली। अंग्रेजी का महत्व बढ़ता गया। अधिक संख्या में शिक्षकों का प्रशिक्षण होने लगा।

1916 तक भारत में पाँच विश्वविद्यालय थे। अब सात नए विश्वविद्यालय स्थापित किए गए। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय तथा मैसूर विश्वविद्यालय 1916 में, पटना विश्वविद्यालय 1917 में, ओसमानिया विश्वविद्यालय 1918 में, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय 1920 में और लखनऊ और ढाका विश्वविद्यालय 1921 में स्थापित हुए। असहयोग आंदोलन से राष्ट्रीय शिक्षा की प्रगति में बल और वेग आए। बिहार विद्यापीठ, काशी विद्यापीठ, गौड़ीय सर्वविद्यायतन, तिलक विद्यापीठ, गुजरात विद्यापीठ, जामिया मिल्लिया इस्लामिया आदि राष्ट्रीय संस्थाओं की स्थापना हुई।

1937 में शिक्षा की एक योजना तैयार की गई जो 1938 में बुनियादी शिक्षा के नाम से प्रसिद्ध हुई। सात से 11 वर्ष के बालक बालिकाओं की शिक्षा अनिवार्य हो। शिक्षा मातृभाषा में हो। हिंदुस्तानी पढ़ाई जाए। चरखा, करघा, कृषि, लकड़ी का काम शिक्षा का केंद्र हो जिसकी बुनियाद पर साहित्य, भूगोल, इतिहास, गणित की पढ़ाई हो। 1945 में इसमें परिवर्तन किए गए और

परिवर्तित योजना का नाम रखा गया 'नई तालीम'। इसके चार भाग थे - (1) पूर्व बुनियादी, (2) बुनियादी, (3) उच्च बुनियादी और (4) वयस्क शिक्षा। हिंदुस्तानी तालीमी संघ (भारतीय शैक्षिक संघ) पर इसका संचालनभार छोड़ दिया गया।

1945 में द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त होते होते सार्जेंट योजना का निर्माण हुआ। छह से 14 वर्ष की अवस्था के बालकों तथा बालिकाओं के लिए अनिवार्य शिक्षा हो। जूनियर बेसिक स्कूल, सीनियर बेसिक स्कूल, साहित्यिक हाई स्कूल ओर व्यावसायिक हाई स्कूल की पढ़ाई 11 वर्ष की अवस्था से 17 वर्ष की अवस्था तक हो। इसके बाद विश्वविद्यालय में प्रवेश हो। डिग्री पाठ्यक्रम तीन वर्ष का हो। इंटरमीडिएट कक्षा समाप्त कर दी जाए। पाँच से कम अवस्थावालों के लिए नर्सरी स्कूल हो। और शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो।

आजादी के बाद राधाकृष्ण आयोग (1948-49), माध्यमिक शिक्षा आयोग (मुदालियर आयोग) 1953, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (1953), कोठारी शिक्षा आयोग (1964), राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968) एवं नवीन शिक्षा नीति (1986) आदि के द्वारा भारतीय शिक्षा व्यवस्था को समय-समय पर सही दिशा देनें की गंभीर कोशिश की गयी।

1948-49 में विश्वविद्यालयों के सुधार के लिए भारतीय विश्वविद्यालय आयोग की नियुक्ति हुई। आयोग की सिफारिशों को बड़ी तत्परता के साथ कार्यान्वित किया गया। उच्च शिक्षा में पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई। पंजाब, गौहाटी, पूना, रुड़की, कश्मीर, बड़ौदा, कर्णाटक, गुजरात, महिला विश्वविद्यालय, विश्वभारती, बिहार, श्रीवेकंटेश्वर, यादवपुर, वल्लभभाई, कुरुक्षेत्र, गोरखपुर, विक्रम, संस्कृत वि.वि. आदि अनेक नए विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई। स्वतंत्रताप्राप्ति के पश्चात् शिक्षा में प्रगति होने लगी। विश्वभारती, गुरुकुल, अरविंद आश्रम, जामिया मिल्लिया इसलामिया, विद्याभवन, महिला विश्वक्षेत्र में प्रशंसनीय वनस्थली विद्यापीठ आधुनिक भारतीय शिक्षा के विद्यालय और प्रयोग हैं।

1952-53 में माध्यमिक शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा की उन्नति के लिए अनेक सुझाव दिए। माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन से शिक्षा में पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई।

भारतीय शिक्षा का आधुनिक स्वरूप एवं प्रमुख पड़ाव इस प्रकार है-

- १७८० : ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा 'कोलकाता मदरसा' स्थापित
- १७९१ : ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा बनारस में 'संस्कृत कालेज' की स्थापना
- १० जुलाई सन् १८०० : कोलकाता में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड वेलेजली ने की।
- १८१३ : एक आज्ञापत्र के द्वारा शिक्षा में धन व्यय करने का निश्चय किया गया।
- १८३५ : मैकाले का घोषणापत्र
- १८४८ : महात्मा जोतिबा फुले ने अपनी पत्नी सावित्रीबाई फुले को पढ़ाने के बाद १८४८ में पुणे में लड़कियों के लिए भारत का पहला प्राथमिक विद्यालय खोला।[2]
- १८५४ : वुड का घोषणापत्र
- १८५७ : कलकत्ता, बंबई और मद्रास में विश्वविद्यालय स्थापित हुए।
- १८७० : बाल गंगाधर तिलक और उनके सहयोगियों द्वारा पूना में फर्ग्यूसन कालेज की स्थापना।
- १८८२ : हण्टर आयोग
- १८८६ : आर्यसमाज द्वारा लाहौर में दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज की स्थापना।
- १८९३ : काशी नागरीप्रचारिणी सभा की स्थापना।
- १८९३ : बड़ोदा के महाराज सयाजी राव गायकवाड़ ने पहली बार राज्य को अनिवार्य शिक्षा से परिचित कराया।
- १८९४-१९२२ : छत्रपति साहू जी महाराज द्वारा वंचितों और गरीब बच्चों के लिए स्कूलों व छात्रावासों की स्थापना की तथा उच्च शिक्षा के लिए उन्हें आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई।

- १८९८ : काशी में श्रीमती एनी बेसेंट द्वारा 'सेंट्रल हिंदू कालेज' स्थापित।
- १९०१ : लार्ड कर्ज़न ने शिमला में एक गुप्त शिक्षा सम्मेलन किया जिसमें 152 प्रस्ताव स्वीकृत हुए थे।
- १९०२ : भारतीय विश्वविद्यालय आयोग की नियुक्ति (लॉर्ड कर्जन द्वारा)स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा हरिद्वार के पास कांगड़ी में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना।
- १९०४ : भारतीय विश्वविद्यालय कानून बना।
- १९०५ : स्वदेशी आंदोलन के समय कलकत्ते में जातीय शिक्षा परिषद की स्थापना हुई और नैशनल कालेज स्थापित हुआ जिसके प्रथम प्राचार्य अरविंद घोष थे। बंगाल टेकनिकल इन्स्टिट्यूट की स्थापना भी हुई।
- १९०६ : बड़ोदा के महाराज सयाजी राव गायकवाड़ भारत के प्रथम शासक थे जिन्होने १९०६ में अपने राज्य में निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा आरम्भ की।[3]
- १९११ : गोपाल कृष्ण गोखले ने प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य करने का प्रयास किया।
- १९१६ : मदन मोहन मालवीय द्वारा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना
- १९१९ - १९२० : महर्षि अरविन्द ने 'अ सिस्टम ओफ़ नेशनल एजुकेशन' नाम से अनेक लेख प्रकाशित किये।
- १९३७-३८ : गांधीवादी विचारों परआधारित बुनियादी शिक्षा योजना लागू।
- १९४५ : सार्जेण्ट योजना लागू।
- १९४८-४९ : विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन
- १९५१ : खड़गपुर में प्रथम आईआईटी की स्थापना
- १९५२-५३ : माध्यमिक शिक्षा आयोग का गठन
- १९५६ : विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना
- १९५८ : दूसरा भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मुम्बई में स्थापित
- १९५९ : कानपुर एवं चेन्नई में क्रमशः तीसरा एवं चौथा आईआईटी स्थापित।
- १९६१ : एनसीईआरटी की स्थापना

प्रथम दो भारतीय प्रबन्धन संस्थान अहमदाबाद एवं कोलकाता में स्थापित किए गए।

- १९६३ : पाँचवां आईआईटी दिल्ली में स्थापित किया गया।

तीसरा I.I.M. बंगलौर में स्थापित।

- १९६४-६६ : कोठारी शिक्षा आयोग की स्थापना, रिपोर्ट प्रस्तुत की।
- १९६८ : कोठारी शिक्षा आयोग की सिफारिशों के अनुसरण में प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति अपनाई गई।
- १९७५ : छह वर्ष तक के बच्चों के उचित विकास के लिए समेकित बाल विकास सेवा योजना प्रारम्भ।
- १९७६ : शिक्षा को 'राज्य' विषय से "समवर्ती" विषय में परिवर्तन करने हेतु संविधान संशोधन।
- १९८४ : लखनऊ में चौथा IIM स्थापित।
- १९८५ : संसद के अधिनियम द्वारा इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना।
- १९८६ : नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति को अपनाया|
- १९८७-८८ : संसद के अधिनियम द्वारा सांविधिक निकाय के रूप में अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (AICTE) स्थापित।

राष्ट्रीय साक्षरता मिशन प्रारम्भ।

- १९९२ : आचार्य राममूर्ति समिति द्वारा समीक्षा के आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 में संशोधन
- १९९३ : संसद के अधिनियम द्वारा सांविधिक निकाय के रूप में राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद स्थापित।
- १९९४ : उच्चतर शिक्षा की संस्थाओं का मूल्यांकन एवं प्रत्यायन करने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद की स्थापना। (बंगलौर में मुख्यालय)

गुवाहाटी में छठे IIT की स्थापना।

- १९९५ : प्राथमिक स्कूलों में केन्द्रीय सहायता प्राप्त मध्याह्न भोजन योजना आरम्भ की गई।
- १९९६ : पाँचवाँ IIM कोझीकोड में स्थापित
- १९९८ : छठा IIM इंदौर में स्थापित
- २००१ : जनगणना में साक्षरता दर 65.4 % (समग्र), 53.7 % (महिला)

पूरे देश में गुणवत्तापरक प्रारंभिक शिक्षा के सर्वसुलभीकरण हेतु सर्व शिक्षा अभियान प्रारंभ।

रूड़की विश्वविद्यालय सातवें IIT में परिवर्तित।

- २००२ : मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाने के लिए संविधान संशोधन।
- २००३ : 17 क्षेत्रीय इंजीनियरिंग कालेज, राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थानों में परिवर्तित।
- २००४ : शिक्षा को समर्पित उपग्रह "एडूसैट" (EduSat) छोड़ा गया।
- २००५ : संसद अधिनियम द्वारा राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्था आयोग गठित।

एनसीईआरटी द्वारा तैयार राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 स्वीकृत।

- २००६ : कोलकाता और पुणे में दो भारतीय विज्ञान शिक्षा और अनुसंधान संस्थान स्थापित।
- २००७ : सातवां IIM शिलांग में स्थापित किया गया।

मोहाली में एक भारतीय विज्ञान शिक्षा और अनुसंधान संस्थान स्थापित किया गया।

राष्ट्रीय संस्कृत परिषद गठित।

केन्द्रीय शैक्षिक संस्था (प्रवेश में आरक्षण) अधिनियम अधिसूचित।

- २००९ : भारतीय संसद द्वारा निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम (RTE) पारित।
- २० मार्च २०१८ : ६२ विश्वविद्यालयों और ८ महाविद्यालयों (जिनमें जेएनयू, बीएचयू और एचसीयू सहित पाँच केन्द्रीय विश्वविद्यालय शामिल हैं) को स्वायत्तता देने की घोषणा [4]
- २९ जुलाई, २०२० : नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति-२०२० लागू।

Corresponding Author: Dr. Baikuntha Nath Shukla
E-mail: anubaikunth.7375@gmail.com
Received: 04 September 2024; Accepted 22 September 2024. Available online: 30 September, 2024
Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-Noncommercial 4.0 International License